भारत की बिजली समस्याः समाधान के रास्ते

के. जयलक्ष्मी

कुछ समय पहले ही देश के पॉवर ग्रिड ताश के पत्तों के महल की तरह धराशाई हो गए। चौबीस घंटे के भीतर ही पांच में से तीन पॉवर ग्रिड - उत्तरी, पूर्वी और पूर्वोत्तर फेल हो गए। ये पॉवर ग्रिड करीब 50 हज़ार मेगावाट बिजली का पारेषण कर रहे थे। इनके फेल होने से देश के लगभग 60 करोड़ लोगों का जीवन अस्त-व्यस्त हो गया।

समस्या की शुरुआत आगरा स्थित पॉवर लाइन में एक अंदरूनी तकनीकी गड़बड़ी से हुई। इससे उत्तरी ग्रिड उसे मिल रही बिजली के एक बड़े हिस्से से वंचित हो गया। ऐसा होते ही सभी राज्यों को तत्काल ग्रिड से अपने लोड में कमी करने को कहा जाना चाहिए था। लेकिन जब तक आदेश जारी होता, तब तक बहुत देर हो चुकी थी। अधिक लोड होने के कारण ग्रिड पर अधिकांश जनरेटर्स की फ्रिक्वेंसी भी कम हो गई थी। कोई भी क्षेत्र अपने लोड में कमी करने को तैयार नहीं था। परिणाम यह निकला कि पूरा ग्रिड ही ठप हो गया।

जून 2012 तक भारत में कुल स्थापित बिजली क्षमता 2,05,340 मेगावॉट थी। वित्तीय वर्ष 2011-12 में देश में बिजली के उत्पादन में 8.1 फीसदी की बढोतरी हुई, लेकिन इसके बावजूद अधिकतम मांग के समय में बिजली की 10.6 फीसदी की कमी रही। कमज़ोर मानसून की वजह से पनबिजली उत्पादन में कमी आई, और गर्मी अधिक होने के कारण बिजली की खपत बढ़ गई। पहले ही बिजली पूरी नहीं मिल पा रही थी और कमज़ोर मानसून के कारण स्थिति और भी बिगड़ गई।

दी नेशनल लोड डिस्पैच सेंटर ने केन्द्रीय विद्युत नियामक आयोग (सीईआरसी) के समक्ष एक याचिका दायर कर कहा है कि कुछ उत्तरी राज्य ग्रिड अनुशासन का पालन नहीं कर रहे हैं। सीईआरसी की पहली सुनवाई में इन राज्यों ने दलील दी कि मांग और उन्हें आवंटित बिजली के कोटे में बहुत अधिक अंतर होने के कारण वे ग्रिड से अधिक बिजली लेने को मजबूर हैं।

ग्रिड्स का ठीक से मेन्टेनेंस न होना भी हालिया संकट का एक बड़ा कारण बताया गया। लेकिन देश में बिजली संकट की दास्तां इससे भी कहीं आगे है।

आबादी में वृद्धि के अनुपात में बिजली उत्पादन में वृद्धि नहीं हुई। कुल बिजली उत्पादन और खपत के मामले में भारत दुनिया में छठवें स्थान पर है, लेकिन प्रति व्यक्ति बिजली उपभोग के मामले में कहीं पीछे है। यहां यह आंकड़ा प्रति व्यक्ति 500 किलोवॉट सालाना है, जबकि चीन में 2600 किलोवॉट और अमरीका में 12,000 किलोवॉट है। वैसे भारत में बिजली की खपत का यह गणित इतना

तालिका 1 : ज़िलों में सर्वाधिक लाइन लॉस, 2000-2009 औसत

ज़िला	लाइन लॉस (प्रतिशत)	वितरित ऊर्जा (करोड़ युनिट)	वसूली हुई (करोड़ युनिट)
हाथरस	49.9	47.25	19.27
मैनपुरी	49.9	24.17	11.85
झांसी	45.8	66.22	36.48
जालौन	45.7	41.92	23.19
इटावा	45.4	32.18	17.35
बुलंदशहर	43.8	93.30	52.65
सहारनपुर	42.8	123.39	70.94
फिरोज़ाबाद	42.5	67.55	39.57
रामपुर	42.3	37.07	21.66
मुरादाबाद	40.5	96.41	57.32

आसान भी नहीं है कि कुल बिजली उत्पादन में जनसंख्या का सीधे-सीधे भाग देने से हासिल हो जाएगा। यहां अब भी 40 करोड़ लोग ऐसे हैं, जो अपने घरों में एक बल्ब के जगमगाने का इंतज़ार कर रहे हैं। इससे साफ है कि देश में बिजली की खपत में भारी असमानता है। भारत की झुग्गी बस्तियों और गांवों में करोड़ों लोग अंधेरे में रहने को मजबूर हैं, जबकि एक वर्ग इसका भारी उपभोग करता है।

भारत में कोयले के दहन के फलस्वरूप उत्पन्न कार्बन डाईऑक्साइड ही ग्रीनहाउस प्रभाव में बढोतरी के लिए 60 फीसदी तक ज़िम्मेदार हैं।

भारत में 205 गीगावॉट बिजली उत्पादन क्षमता में से आधे से अधिक भाग कोयला आधारित है। यहां के कोयला भंडार बहुत तेज़ी से खत्म हो रहे हैं। यहां पाया जाने वाला कोयला अपेक्षाकृत कम गुणवत्ता का है जिसमें 30 से 45 फीसदी तक राख होती है। निम्न गुणवत्ता का कोयला होने के कारण भारत के ताप बिजलीघर युरोप की तुलना में 50 से 120 प्रतिशत अधिक कार्बन डाईऑक्साइड का उत्सर्जन करते हैं।

भारत के अधिकांश कोयला आधारित संयंत्र बहुत पुराने हैं और उत्सर्जन नियंत्रण तकनीकें (जैसे सिलेक्टिव केटेलिटिक रिडक्शन) से लैस नहीं हैं। हालांकि कोयला आधारित संयंत्रों की कार्यक्षमता में हाल के वर्षों में सुधार हुआ है, लेकिन फिर भी वह काफी कम है। भारत के सभी कोयला आधारित बिजली संयंत्रों की औसत कार्यक्षमता केवल 29 फीसदी है। हालांकि 500 मेगावॉट की बड़ी इकाइयों की कार्यक्षमता थोड़ी ज़्यादा, करीब 33 फीसदी है। देश की अधिकांश ताप बिजली इकाइयों का सामान्य कार्यकाल पूरा हो चुका है।

पारेषण के दौरान विद्युत हानि आज भारत के ऊर्जा क्षेत्र की सबसे बड़ी चिंता बनी हुई है। तकनीकी वजहों से हानि के साथ बिजली की चोरी से समस्या और भी जटिल हो जाती है। पारेषण एवं वितरण हानि व बिजली की चोरी पर कैलिफोर्निया, मिशिगन और प्रिंसटन विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं ने उत्तरप्रदेश का एक अध्ययन किया था। यह अध्ययन वर्ल्डवॉच में प्रकाशित हुआ है। इस अध्ययन के नतीजे तालिका 1 में देखें।

भारत में अधिकतर पारेषण एवं वितरण व्यवस्था सरकारों के पास है। क्या इस व्यवस्था का निजीकरण करने से यह अधिक कार्यकुशल बन सकेगी? आखिर बिजली की चोरी के खिलाफ सख्त कानूनी प्रावधान क्यों नहीं किए जाते? सच तो यह है कि इसका समाधान केवल कानूनी प्रावधानों से नहीं किया जा सकता। इसके लिए राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक पहलुओं को एक साथ जोड़कर देखना होगा, तभी कोई रास्ता निकल सकेगा।

भारत के केंद्रीय विद्युत अभिकरण ने माना है कि बिजली क्षेत्र की कुशलता में सुधार और लागत में कमी करने के लिए मौजूदा बिजली संयंत्रों का नवीनीकरण और आधुनिकीकरण किया जाना चाहिए।

मार्च 2012 तक के आंकड़ों पर नज़र डालें तो पता चलता है कि भारत की कुल 200 गीगावॉट उत्पादन क्षमता में से केवल 25 गीगावॉट बिजली ही गैर पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों (नवीकरणीय ऊर्जा) से मिलती है। इसमें भी सौर ऊर्जा का हिस्सा तो बहुत ही कम है। भविष्य के जो लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं, उनमें जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय सौर मिशन के तहत तय लक्ष्य भी शामिल हैं। इसके अंतर्गत वर्ष 2022 तक देश में 20 गीगावॉट सौर ऊर्जा क्षमता स्थापित की जानी है। भारत सरकार ने गैर पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों से वर्ष 2017 तक कुल मिलाकर 55 गीगावॉट और 2022 तक 74 गीगावॉट क्षमता स्थापित करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। जीवाश्म ईंधन के तेज़ी से घटते संसाधनों और परमाणु ऊर्जा को लेकर लोगों के एक बड़े तबके के विरोध के चलते गैर पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों से ही उम्मीद लगाई जा सकती है।

ग्रिड की स्थिरता के सम्बंध में केन्द्रीय विद्युत अभिकरण के अध्यक्ष ए.एस. बक्षी के नेतृत्व में एक पैनल ने स्मार्ट ग्रिड्स और विशेष सुरक्षा योजनाओं (एसपीएस) के क्रियान्वयन की अनुशंसा की थी। एसपीएस ग्रिड ठप होने की स्थिति को रोकने में मदद करता है। इसे राज्यों के बिजली वितरण केन्द्रों पर ही क्रियान्वित करना होगा। यह सिस्टम गंभीर स्थिति में सर्किट से अपने आप संपर्क खत्म कर देता है।

हालांकि केवल तकनीकों से ही काम नहीं बनने वाला। भारत की मौजूदा बाध्यताओं के बीच 'स्मार्ट ग्रिड' से ग्रिड को कार्यकुशल बनाया जा सकता है, लेकिन ग्रिड्स की संख्या और लागत के मद्देनज़र यह काम चरणबद्ध तरीके से ही संभव है। कुल मिलाकर देखें तो ग्रिड स्थिरता के लिए मांग के अनुरूप बिजली की आपूर्ति और पारेषण नेटवर्क की मज़बूती ज़रूरी होगी और इन्हें दीर्घकालीन उपायों के माध्यम से ही अंजाम दिया जा सकता है।

एक बहस यह भी है कि क्या सरकार को उत्पादन क्षमता में वृद्धि करनी चाहिए या पारेषण और वितरण के दौरान होने वाली क्षति को रोकना उसकी पहली प्राथमिकता होनी चाहिए? सरकार द्वारा अधिक बिजली उत्पादन के वादों के बावजूद देश में बिजली का संकट बरकरार है। हाल ही में भारत के बिजली क्षेत्र में 400 अरब डॉलर का निवेश हुआ है। इससे वर्ष 2017 तक बिजली के उत्पादन में 88 हज़ार मेगावॉट की वृद्धि की जा सकेगी। आज़ादी के बाद से देश में बिजली उत्पादन में करीब 180 गुना वृद्धि हो चुकी है, लेकिन इसके बावजूद आबादी के बड़े हिस्से तक बिजली नहीं पहुंच पाई है। वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार करीब 40 करोड़ लोग बिजली ग्रिड के दायरे से बाहर थे।

अब भारत की पारेषण और वितरण क्षति पर विचार करते हैं। यह क्षति वर्षों से जंग खा रहे उपकरणों, बिजली चोरी और अविश्वसनीय निगरानी के चलते होती है। एक अनुमान के अनुसार बिजली की चोरी 66 हज़ार मेगावॉट तक पहुंच गई है। सवाल यह है कि पहले इस चोरी पर नियंत्रण करना चाहिए या नए बिजली संयंत्र बनाने चाहिए?

एकीकृत ऊर्जा नीति (ईआईपी) के एक आकलन के अनुसार देश की बिजली उत्पादन क्षमता को पांच गुना तक बढ़ाना होगा (यानी वर्ष 2006 की 1,60,000 मेगावॉट से बढ़ाकर वर्ष 2032 तक 8,00,000 मेगावॉट करना)। आलोचकों का कहना है कि ईआईपी ने यह आकलन करते समय सम्बंधित सामाजिक और पर्यावरणीय प्रभावों को ध्यान में नहीं रखा।

सवाल यह है कि आखिर नए बिजली संयंत्रों के लिए ज़रूरी संसाधन कहां से आएंगे? कोयला आवंटन में 'नो गो ज़ोन' को लेकर पहले ही खूब विवाद चल रहा है। पर्यावरणविदों के साथ संघर्ष के कारण आने वाले समय में कोयले का आयात बढ़ाना ही पड़ेगा। बिजली क्षेत्र पानी का भी खूब दोहन करता है, यहां तक कि कृषि क्षेत्र से ज़्यादा। इसलिए देश बिजली संकट के समाधान के लिए जितने अधिक बिजली संयंत्र बनाएगा, पानी की उतनी ही अधिक कमी होती जाएगी।

ओवर विड्राल की मुख्य वजह बढ़ता तापमान भी था, जिसके कारण शहरों में एयर कंडीशनर लगातार चलते रहे। इसके अलावा गांवों में सूखी ज़मीनों से भूजल के दोहन के कारण भी बिजली का बहुत अधिक इस्तेमाल किया गया। अगर मानसून धोखा देते रहे तो ज़मीन की गहराई से इसी तरह पानी का दोहन जारी रहेगा और बिजली की मांग बढ़ती रहेगी। इस स्थिति से तब तक नहीं बचा जा सकता, जब तक कि सिंचाई की बेहतर योजनाएं अमल में नहीं लाई जातीं। आधिकारिक आंकड़े बताते हैं कि देश में अब भी 1.10 करोड़ हैक्टर ज़मीन तक किसी भी सिंचाई परियोजना से पानी नहीं पहुंच पाया है।

कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि एक उचित विद्युत शुल्क नीति हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए। अगर ऐसी ही कोई विद्युत शुल्क नीति और व्यावहारिक सब्सिडी सिस्टम अमल में लाई जाए तो बिजली की मांग और आपूर्ति के बीच की दरार को काफी हद तक पाटा जा सकता है। किसानों को मुफ्त बिजली और बिजली की दरों में वृद्धि को लेकर हिचक के चलते सरकारी बिजली कंपनियां घाटे में चल रही हैं। इससे वे अपने पॉवर सिस्टम को अपग्रेड नहीं कर पा रही हैं।

ऊर्जा सुरक्षा के लिए ऐसे एकीकृत ऊर्जा संसाधन प्रबंधन नज़रिए की ज़रूरत है, जिसमें केंद्रीकृत और विकेंद्रीकृत नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को शामिल किया जा सके।

हाल ही में जो ब्लैक आउट की स्थिति पैदा हुई, वह इस बात का संकेत है कि किस तरह जटिल व्यवस्थाओं के ढहने की आशंका ज़्यादा होती है, फिर चाहे वे पॉवर ग्रिड हों या परमाणु संयंत्र। स्थानीय स्तर पर छोटी-छोटी इकाइयों

का प्रबंधन करना कहीं बेहतर विकल्प है, खासकर दूर-दराज़ इलाकों में। विशेषज्ञों का मानना है कि केंद्रीकृत विशालकाय बिजली संयंत्रों पर निर्भरता कम करनी चाहिए, साथ ही इंटरकनेक्टेड नेटवर्क को भी घटाना चाहिए। केवल भारी उद्योगों और रेलवे को ही केंद्रीकृत नेटवर्क से बिजली की आपूर्ति करनी चाहिए। जिन उद्योगों और संगठनों में बहुत अधिक कर्मचारी कार्यरत हैं, उन्हें नवीकरणीय ऊर्जा पर आधारित केप्टिव प्लांट्स लगाने की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए।

बिजली क्षेत्र की अक्षमता के कारण देश को वर्ष 2011 में पहुंचा नुकसान एक लाख 25 हज़ार करोड़ रुपए को पार कर गया। उचित प्रबंधन उपायों से बिजली की 35 से 40 फीसदी ज़रूरत को कम किया जा सकता है। इसलिए सबसे पहली प्राथमिकता तो इन उपायों को लागू करने की होनी चाहिए। कार्यक्षमता में वृद्धि, न्यूनतम बिजली क्षति, ज़िम्मेदारी के साथ इसका उपयोग और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का अधिक से अधिक इस्तेमाल एकीकृत ऊर्जा संसाधन प्रबंधन के आधारभूत घटक होने चाहिए।

अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (आईईए) ने वर्ष 2011 में चेताया था कि बिजली के लिए कोयले पर निर्भरता से अगले पांच सालों में दुनिया ऐसी राह पर पहुंच जाएगी जिससे वैश्विक तापमान में दो डिग्री सेल्सियस की बढोतरी को कोई नहीं टाल सकेगा। सदी के अंत तक तो इसमें और इज़ाफा हो जाएगा। विभिन्न संगठन तापमान में इस दो फीसदी बढोतरी को बहुत ही भयावह मानते हैं। उनका कहना है कि इससे सूखा और बाढ़ जैसी घटनाएं बढ़ जाएंगी, फसल का उत्पादन कम हो जाएगा और धरती पर जीव-जंतुओं व वनस्पतियों की 30 फीसदी प्रजातियां खत्म हो जाएंगी। ऊर्जा विशेषज्ञों का कहना है कि इस स्थिति को रोकने के लिए हमें भविष्य की अपनी ऊर्जा ज़रूरतों को इस तरह से पूरा करना होगा कि उससे कार्बन का उत्सर्जन शून्य हो।

दक्षिण कोरिया ने 'हरित विकास' की दिशा में बहुत काम किया है। वर्ष 2009 में दक्षिण कोरियाई सरकार ने मंदी से निपटने के लिए जिस 38.10 अरब डॉलर के पैकेज की घोषणा की थी, उसका 80 फीसदी हिस्सा ताज़ा जल जैसे संसाधनों के बेहतर इस्तेमाल, ऊर्जा दक्ष भवनों के निर्माण, नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों, न्यूनतम कार्बन उत्सर्जित करने वाले वाहनों व रेल नेटवर्क के विकास पर खर्च किया जाएगा। इसके अलावा उसने हरित खरीदी कानून लागू किया है, ताकि पर्यावरण अनुकूल उत्पादों के इस्तेमाल को प्रोत्साहन मिल सके। इसके लिए दक्षिण कोरियाई सरकार ने कार्बन कैश-बैक सिस्टम भी शुरू किया है जिसमें ऐसे उत्पाद खरीदने वाले लोगों को कार्बन पाइंट दिए जाते हैं। इन पाइंट से सरकारी दुकानों पर किसी भी खरीदी में छूट मिलती है।

अंत में कहा जा सकता है कि अगर देश में राजनीतिक इच्छाशक्ति और मज़बूत नेतृत्व हो तो सबको बिजली, और वह भी सस्ते दामों पर, उपलब्ध करवाई जा सकती है। ***(स्रोत फीचर्स)***